वेदान्त पीयूष

वेदान्त मिशन की हिन्दी मासिक पत्रिका

वर्ष ८ मार्च २००९ अंक ८

होली की शुभकामनाएं

(११ मार्च २००६)

दृष्टिवान व्यक्ति को ईश्वर के द्वारा दिए गए अनेकों उपहारों में से 'रंग'
सबसे दिव्य, पवित्र एवं विशिष्ट है - रस्किन

विषय सूचि

१.	वेदान्त लेख	:	वैराग्य - ज्ञान की परिपक्वता
२.	ग्रन्थ व्याख्या	:	उपदेश सार - श्लोक सं ३०
३.	उपासना	:	शिव महिम्नः स्तोत्रम् - श्लोक सं ७
४.	व्रत एवं त्योहार	:	होली - रंगो का त्योहार
५.	लेख	:	श्रीराम एवं सीता का सम्बन्ध
५.	मिशन समाचार	:	पूर्व एवं आगामी कार्यक्रम सूचना

वेदान्त पीयूष

प्रेम और प्रकाश का विस्तार

वेदान्त मिशन की हिन्दी मासिक पत्रिका
वेदान्त एवं सनातन धर्म की सन्देशवाहक

इण्टरनेट पर सन २००० से प्रकाशित

वेदान्त मिशन संस्थापक
पूज्य गुरुजी श्री स्वामी आत्मानन्दजी

संपादिका
स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

प्रकाशन स्थान
वेदान्त आश्रम
ई/२६४८-५०, सुदामा नगर
इन्दौर-४५२००६, भारत

Web:
www.vmission.org.in

Email:
vmission@gmail.com

पूज्य गुरुजी से

हरिः ओम्!

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी चिन्मयानन्दजी एक बार बता रहे थे कि हम जिस 'हिस्टरी' को जानते हैं, वह केवल 'हिस-स्टोरी' (His-Story) है। इसका आशय यह है कि यद्यपि समस्त पुराण अतीत की किसी घटना व कथा से सम्बद्ध चर्चा करते हैं, पर उसका मूल संदेश सदैव कुछ आध्यात्मिक एवं सनातन होता है। जो इसे समझता हैं वह ही उसके मूल रहस्य से अवगत हो पाता है। कोई भी होली, रामनवमी, या महाशिवरात्री जैसा त्यौहार हो, भक्त को सदैव इन समस्त पौराणिक कथाओं तथा परम्पराओं में छिपे हुए संदेशों को समझने का प्रयास करना चाहिए।

महाशिवरात्री का ही दृष्टान्त ले। उसके बारे में पुराणों में अनेकों कथाएं प्राप्त होती हैं। वे हमें सकारात्मक मूल्यों को मन में धारण करना तथा अपने सामर्थ्यों को जगाने में सहायक होती हैं, लेकिन उनका आध्यात्मिक रहस्य उससे अत्यन्त विलक्षण और महत्वपूर्ण है। मूलरूप से यह पर्व आध्यात्मिक सत्य में जगने की प्रेरणा रूप है। रात्री अन्धकार का प्रतीक होती है, जिसमें समस्त जीव सो रहे हैं तथा स्वप्न देख रहे हैं। यह एक द्वैत का स्वप्न है, जहां हम अपने आपको एक व्यक्ति मात्र समझकर जीते हैं और परिणाम स्वरूप सतत संसरण को प्राप्त होते रहते हैं। यह अज्ञान की वजह से हमारे मन की कल्पना मात्र है। हम कितनी भी समृद्धि अथवा विशिष्ट अनुभूतियां प्राप्त करलें यह संसरण तब तक चलता रहेगा, जब तक हम जगते नहीं हैं। हमें उस तथ्य में जगने की आवश्यकता है, जो हमारे मन की कल्पना नहीं है। वह ही काल से परे और कल्याणकारी होती है। माण्डूक्य उपनिषद् ने अपनी इसे तुरीय अवस्था वाली एवं शिवस्वरूप बताया। वास्तविक शिवरात्री तो अपने इस शिवतत्त्व में जगने को ही कहते हैं।

रात्री शब्द गहरी निद्रा का भी सूचक होता है, कि जहां किसी भी प्रकार की कोई कल्पना का अस्तित्व नहीं है। अपनी इस गहरी निद्रा तुल्य अवस्था को सजगतापूर्वक जगाएं तथा जाग्रत और स्वप्न के मन के समस्त खेल को किनारे करें। जब मन शान्त होता है, तब 'क्या है' उसे देखें। वह 'मैं' जो मन के शान्त होने के समय भी विद्यमान है, वह ही मन की कल्पना या उसकी उपज नहीं है। यह ही वास्तविक 'हम' हैं। उस सत्य में जग जाना ही इस उत्सव को सही अर्थ में मनाना है।

प्रेम और ओम् सहित,

स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

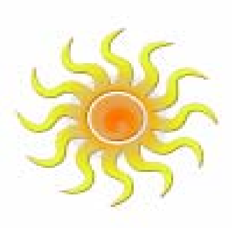

प्रार्थना

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादि देवासुराः

यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः।

यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां

वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्।।

जिनकी माया के वशीभूत समस्त विश्व, ब्रह्मादि देवता और असुर है, जिनकी सत्ता से रस्सी में सांप की भांति यह सारा दृश्य जगत् सत्यवत् प्रतीत होता है, और जिनके केवल चरण की संसार से पार जाने के इच्छुक के लिए नाव तुल्य है,उन समस्त कारणों से परे श्रीराम नाम से प्रसिद्ध हरि की हम वन्दना करते हैं।

वैराग्य – ज्ञान की परिपक्वता

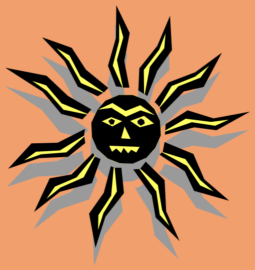

सर्वे येनानुभूयन्ते
यः स्वयं नानुभूयन्ते।
तमात्मानं वेदितारं
विद्धि बुद्ध्या सुसूक्ष्मया ॥

जिसके द्वारा समस्त अनुभव में आता हैं, किन्तु जो स्वयं किसी के अनुभव का विषय नहीं बनता हैं, उन ज्ञान स्वरूप आत्मा को अपनी अत्यन्त सूक्ष्म बुद्धि से जानों।

ज्ञान के लिए साधक के अन्तर्गत एक विशेष पात्रता होती है। जिसमें वैराग्य का अत्यधिक महत्व बताया गया है। वैराग्य जगत के साथ परिपक्वता से युक्त सम्बन्ध है। ज्ञान का वास्तविक प्रसाद तब ही मिलता है, कि जब विवेक वैराग्य में परिणत होता है। वैराग्य ही ज्ञान के आत्मसात् होने का मापदण्ड है। विवेक का जब तक वैराग्य में पर्यवसान नहीं होता है, तब तक ज्ञान बोझस्वरूप बन जाता है इतना ही नहीं किन्तु यह अहं की संतुष्टि का नए अध्याय का आरम्भ ही है। वैराग्य ही ज्ञान की परिसमाप्ति है।

किसी भी मनुष्य की महानता उनके पास क्या है, उससे नहीं जानी जाती है, किन्तु कम से कम वस्तु में संतुष्ट रह पाने के सामर्थ्य से ही जानी जाती है। अन्ततः तो अपने आप में पूर्णरूप से तृप्त रहने का सामर्थ्य ही महानता का लक्षण होता है। वास्तविक पूर्णता कभी भी पराधीनता से प्रकट नहीं होती है। किन्तु समस्त पराधीनताओं के अभाव में ही होती है। यह वो अवस्था है जहां व्यक्ति पूर्णरूप से अपने होने मात्र में संतुष्ट होता है। समस्त शोक और पीड़ाएं पराधीनता से ही उत्पन्न हुआ करती हैं। जितनी ज्यादा पराधीनता होती है, उतना ही ज्यादा अपने अन्दर खोखलापन होता है।

वैराग्य शब्द एक विशेष प्रकार के सम्बन्ध को दर्शाता है, जो जीवन के तथ्यों को ध्यान में रखकर होता है। वह एक परिपक्वता, समत्व तथा तटस्थता को दर्शाता है। यह वो सम्बन्ध है, जहां हम वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति को यथावत् देखने में समर्थ होते हैं, न कि अपने सन्दर्भ से। वैराग्य का अर्थ किसी प्रकार का द्वेष या किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति से पलायन नहीं है, किन्तु अपने अस्तित्व मात्र में होना है, जो समस्त प्रकार की इच्छाओं से रहित है। वस्तुतः किसी के प्रति द्वेष उन विषय के प्रति अपनी अत्यधिक महत्वबुद्धि को ही उजागर करता है। किसी के प्रति भी अत्यन्त महत्वबुद्धि सदैव दोषवान होती है। इससे विचार का सामर्थ्य कुण्ठित होता जाता है। वास्तविक वैराग्य अनित्य वस्तु की अनित्यता को देखने के द्वारा ही उद्भुत होता है। हम उसकी सुन्दरता को देख पाएं, उसके प्रति संवेदनशील हो सकें, परन्तु उसकी सीमितता से अवगत होने की वजह से उसकी अपेक्षा से रहित है। किसी भी वस्तु के प्रति स्वामित्व स्थापित किए बगैर भी जगत की सुन्दरता को और भी अच्छी तरह से देखा और महसूस किया जा सकता है। इस प्रकार का रवैया ही हमें जगत को यथावत् देखने में सहायक होता है, और यह ही गुण अपनी वास्तविकता को जानने के लिए तथा जगत के सत्य को जानने के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

वैराग्य शब्द का प्रयोग कई बार एक संसारी व्यक्ति में भय को उत्पन्न करता है, किन्तु यह ही जगत के साथ परिपक्वता के सम्बन्ध होता है। वैराग्य का अर्थ होता है विगतः रागः अर्थात् राग व आसक्ति का अभाव। हमारा मन मूलरूप से स्थायी, नित्य और पूर्णता की तलाश करता है, और यदि हम जो परिवर्तनशील और सीमित है, उसकी परिच्छिन्नता को देख पाते हैं, तो उसके प्रति आसक्ति होना सम्भव ही नहीं है। अध्यात्म के साधक में इस प्रयासपूर्वक विकसित करना चाहिए, जो कि सिद्ध में स्वाभाविक ही, प्रयासरहित होती है। जैसे पका हुआ फल वृक्ष को स्वतः छोड़ देता है, वैसी असंगता सिद्ध में होती है तथा जैसे फूल में सुगन्ध होती है – उस प्रकार उनमें यह शोभायमान होती हे।

उपदेश सारम् – श्लोक 30

पिछले श्लोक में महर्षिजी ने बताया कि परं सुख बन्धन और मुक्ति से परे है, इसे कोई दैवी गुणों से सम्पन्न जीव ही प्राप्त कर सकता है। ऐसे महान लक्ष्य की सिद्धि के लिए निश्चित रूप से महान प्रयास की अपेक्षा होगी। ऐसी शंका हो तो महर्षिजी उसका समाधान करते हैं तथा इस ग्रन्थ का उपसंहार भी करते हैं।

अहमपेतकं निजविभानकम् ।
महदिदं तपो रमण वागियम् ॥

अहम् अपेतकं – अहंकार से रहित, **निजविभानकम्** – स्वप्रकाशस्वरूपता, **इदं** – यह, **महद्** – महान, **तपः** – तपस्, **इयम्** – यह, **रमण** – रमण महर्षि की, **वाक्** – वाणी है।

अहंकार से रहित, स्वप्रकाशस्वरूपता में जगना ही महान तप है, यह ही 'रमण' की वाणी है।

शिवपुराण के अन्तर्गत के प्रसंग में महादेवजी उन तपस्वी ब्राह्मणों को जो उपदेश दे रहे थे, उन उपदेश का क्या स्वरूप होगा, इसे महर्षिजी ने इन उपदेश सार ग्रन्थ में प्रतिपादन किया।

ग्रन्थ आरम्भ करते हुए महर्षिजी ने बताया कि कर्म, उपासना, योग आदि समस्त साधन चित्तशुद्धि हेतु होते हैं, उन सबका अध्यात्मयात्रा में क्या योगदान होता है, उसे स्पष्ट किया। तथा अन्ततः मन-जो समस्त वृत्तियों का प्रवाह है, उन समस्त वृत्तियों की गहराई में जाकर जो अहंवृत्ति है, वह क्या है, उसके बारे में विचार करना ही मोक्ष का हेतु है। यह अहंवृत्ति को आश्रित बनाकर ही समस्त कर्म, विविध अनुभूतियां की जाती है। तथा उसी को आधार बनाकर अस्मिता का निर्माण होता है। इस मैं का विसर्जन करना अर्थात् वर्तमान की अस्मिता को ही विसर्जित कर देना, जो आज हमारे व्यावहारिक जीवन का आधार बनी हुई है। जब इसे बाधित किया जाता है, तो मानो जीवन का आधार ही छिना जा रहा हो, ऐसा प्रतीत होने लगता है, और असुरक्षा का अनुभव होता है, यह स्थिति कष्टदायी अवश्य होती है, पर वह ही अनुग्राहक होती है। क्योंकि जब इस क्षुद्र अस्मिता का विसर्जन होता है, तो ही अपनी ब्रह्मस्वरूपता का साक्षात्कार होता है। इसे ही महर्षिजी ने महान तप की संज्ञा दी है।

तपस्या का अध्यात्मलक्ष्य की सिद्धि हेतु बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। भौतिक लक्ष्य की सिद्धि हेतु जिसे उचित समझा था, तथा अध्यात्मलक्ष्य के लिए जो विपरीत आदतें होती है, उसे लक्ष्य के अनुरूप ढालने की साधना ही तपस् कहलाती है। अपनी आदतों के तथा संस्कारों के विपरीत जाना निश्चित रूप से कष्टदायी होता है। परन्तु यह ही उचित होता है। तपस्या से न केवल व्यक्तित्व को लक्ष्य के अनुरूप बनाया जाता है, परन्तु उससे संकल्पशक्ति में भी वृद्धि होती है।

अपनी ब्रह्मस्वरूपता के साक्षात्कार हेतु अपनी अस्मिता के अनुरूप जीने की आदत को बदलने के अलावा इसके लिए तीव्र संकल्प होना भी परं आवश्यक है। क्योंकि जाने अन्जाने अहं की संतुष्टि रूप प्रलोभन आकर विचलित करने की सम्भावना होती है।

महर्षिजी बताते हैं यह रमण की वाणी है। तथा यह रमण वाणी अर्थात् कल्याणकरी वचन है। क्योंकि यह ही मोक्ष को प्रदान करने वाली है।

“होली जली तो.....“

होली जली तो क्या जली,
पापिन अविद्या नहीं जली,
आशा जली नहीं राक्षसी,
तृष्णा पिशाची नहीं जली ।
झुलसा न मुख आसक्ति का,
नहीं भस्म ईर्ष्या की हुई,
ममता न झोंकी अग्नि में,
नहीं वासना फूंकी गई ।।
भोला ! भली होली भयी,
भ्रम भेद कूड़ा बह गया,
नहीं तू रहा, नहीं मैं रहा,
आप सो ही रह गया ।
अद्वैत होली चित्त देकर,
पिचकारि सद्गुरु की लगे,
सब रंग कच्चे जाय उड़,
एक रंग पक्के में रंगे ।।

प्रेममार्ग में बाधा..

प्रेममार्ग की सबसे बड़ी बाधा है अहंकार। 'मैं' अथवा अहंकी दिवार व्यक्तित्व और अस्तित्व दोनोंको बांटती है। शरीर के पास रहकर भी व्यक्ति दूर बना रहता है। परिवार से लेकर राष्ट्रतक इसी प्रवृत्तिसे टूट रहे है। अहंकार कभी भी झुकनेको राजी नहीं होता। वह केवल लेना जानता है। किसीको आनन्द देनेवाली छायाको छीनकर अहंकार आनन्दित होता है। अहंकार एक प्रयोजन है, वह पाकर भी दुःखी रहता है। आचार्य कहते है कि 'को वा दरिद्रो हि विशालतृष्णः। जो अति महत्वाकांक्षी होता है उनका अहंकार बडा होता है उन्हें संसार के दुःख घेरे रहते है। गोस्वामीजी कहते है कि संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोक दायक अभिमाना।। प्रेम परमात्मा से नहीं, बल्कि पद-प्रतिष्ठा और मान बडाई से इसका गहरा सम्बन्ध है।

होली - रंगों का त्यौहार

वन–उपवन में प्रकृति अपना नया रूप सजा–सवार रही है । पेड़ हरिया रहे है, तो लताएं फूलों से बतियाती सी लग रही है। कहीं पीलें सरसों के फूलों से खेत सजे हुए है। उस पर सूर्य की सुनहरी धूप उतर आई है। यह तो बसंत का आगमन हो रहा है। बसंत कामदेव का पुत्र है। यहाँ जंगलों में टेसू के फूलों से खाखरे के पेड़ भी लद गए हैं। इसका रंग बसंत के आने की सूचना देता है, तो इसकी रंगत फागुन में होली तक बनी रहती है। होली आने तक धरती ऐसी फूलों–पत्तों से रंग–बिरंगी हो जाती है, कि मानो वो भी कहीं होली खेल कर न आई हो! ऐसा लगता है, कि आनन्द स्वरूप परमात्मा की खुशियाँ फागुन के रंगों में छ़लक रही है।

वसंत ऋतु में होली फाल्गुनी पूर्णिमा को आती है। बाहरी खुशियों के रंग में लोग समस्त राग–द्वेषों को भूल कर एक–दूसरे के गले मिलकर शुभ कामनाएं देते है। रात्रि को होलिका–दहन होता है, यह धर्म की अधर्म पर विजय का प्रतीक है।

उसके साथ एक पौराणिक कथा भी जुड़ी हुई है। हिरण्यकश्यप नामक राक्षस का प्रहलाद नामक पुत्र था। वह अत्यंत धार्मिक प्रवृत्ति वाला विष्णु भक्त था। इससे विपरीत, हिरण्यकश्यप ने अपनी आसुरी प्रवृत्तियों के कारण अपने पूरे राज्य में पूजा हवनादि सभी धार्मिक अनुष्ठान बन्द करवा कर स्वयं की पूजा के लिए सबको बाध्य किया। प्रहलाद ने उनकी इस आज्ञा को नहीं माना, वह भगवान विष्णु की ही आराधना करता रहा। पिता ने पहले तो उसे सचेत किया, लेकिन फिर अपने ही पुत्र को मारने के लिए भिन्न–भिन्न उपाय करने लगा। किन्तु हर परिस्थिति में भगवान विष्णु ने प्रहलाद की रक्षा करी। अन्ततः हिरण्यकश्यप ने अपनी होलिका नामक बहन के साथ मिलकर अपने पुत्र को समाप्त करने कि योजना बनाई । होलिका को पूर्व में ऐसा वरदान मिला हुआ था कि जब वह एक विशिष्ट वस्त्र पहन कर अग्नि में प्रवेश करेगी तो अग्नि उसे जला नहीं सकेगी। प्रहलाद को मारने के लिए यह उपाय किया गया कि, उसे उस विशिष्ट वस्त्र को धारण किए होलिका की गोदी में बैठा कर चारों ओर आग लगा दी गई । उस समय अचानक ही अत्यंत तेजी से आंधी चली और होलिका के सर से वस्त्र उड़कर प्रहलाद पर अट़क गया एवं भगवान विष्णु ने आंधी के रूप में आकर प्रहलाद की रक्षा करी। होलीका वहीं पर जल कर भस्म हो गई ।

इसी के प्रतीक रूप में सायंकाल होलीका दहन करके इस प्रार्थना के साथ उसकी परिक्रमा करी जाती है कि हमारे अंदर के समस्त राक्षसी प्रवृत्तियों का नाश करके हमें भी प्रहलाद जैसी भक्ति एवं श्रद्धा का प्रसाद प्राप्त हो । होलीका दहन के पश्चात् विविध प्रकार के अबीर–गुलाल आदि रंग से एक दूसरे को प्रेम से रंग लगाते हुए धर्म के विजय की खुशियाँ मनाई जाती है ।

वर्तमान समय में इसमें थोड़ी विकृति आ गई है कि अनेकों लोग एक–दूसरे प्रति संवेदनशीलता से रहित होकर नुकसानदायी रंग ऑईल–पेन्ट, कीचड़ आदि का प्रयोग करते है । जो कि स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिप्रद है; कई बार उनसे कई लोग अपनी दृष्टि भी गवाँ बैठते है । इतना ही नहीं किन्तु यह कलह एवं आपसी रंजिशें उत्पन्न करने का कारण बनता है । अतः इस बात का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है कि त्योहार खुशियाँ बाँटने का तथा समस्त भेद को भूलकर अन्योन्य प्रेम बढ़ाने के लिए पर्व होता है । अपनी महान परंपराओं का हम सब उचित लाभ लें, न कि उन्हें विकृत कर लोगों को धर्म से ही दूर करें ।

गोस्वामीजी श्रीराम और सीताजी को समुद्र और वीचि का दृष्टान्त देते हैं। समुद्र मे उठती हुई लहरो का सम्बंध या तो चन्द्रमा से होता है या भीषण तुफान से। चन्द्रमा की बढ़ती हुई कला को देखकर समुद्र तरंगायित हो उठ़ता है। चन्द्रमा की पूर्णता को देखकर समुद्र का आनन्द उनके हृदय में नहीं समाता, वह अपनी लहरों से उमड़ता हुआ चन्द्रमा का अभिवादन करता है। ब्रह्म प्रशान्त समुद्र की भांति है, और भक्त के अन्तःकरण का भाव चन्द्रमा के समान प्रतिक्षण बढ़ता ही जाता है। भक्त के प्रतिक्षण वर्द्धनशील भाव को देखकर ईश्वर का हृदय प्रीति, करुणा और वात्सल्य से उद्वेलित हो उठता है, कृपा की लहरें उठने लगती हैं। समुद्र तुफान द्वारा भी तरंगायित होता है तब उसके विकराल रूप का साक्षात्कार होता है। जब रावण जैसा कोई दुर्दमनीय व्यक्ति अपने अत्याचारों से विश्व को संत्रस्त कर देता है, तब समाज की व्याकुलता ही ईश्वर के अन्तःकरण में संहारशक्ति को चेतनवान कर देती है। उस समय स्वयं को अजेय मानने वाले दुर्दान्त दस्यु को उन लहरों के द्वारा डूबोकर नष्ट कर दिये जाते हैं।

श्रीराम समुद्र हैं और श्रीसीता वीचि। वस्तुतः वे अनुग्रह और संहारशक्ति का घनीभूत रूप हैं। यद्यपि वीचि और समुद्र में कोई भेद नहीं होता है। फिर भी भक्तों के भाव की पूर्ति के लिए अथवा दुष्टों का संहार करने के लिए ईश्वर स्वयं को द्विविध रूपों में विभक्त कर अवतरित होते हैं।

पुष्पदन्तजी अनेकों नास्तिकवादी का खण्डन करके अब आस्तिकों की चर्चा करते हुए परमात्मा की स्तुति करते हैं, कि कैसे भिन्न-भिन्न शास्त्र, सम्प्रदाय प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप से आप ही का प्रतिपादन कर रहे हैं। यह दर्शाने के द्वारा स्तुति करते हैं।

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्न प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्याद् ऋजुकुटिल नाना पथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

‘हे अमरवर! तीन वेद, सांख्य, योग, वैष्णव, पशुपति आदि अनेकों मत व सम्प्रदाय देखे जाते हैं, वे अनेकों सरल और कुटिल पथ का अनुसरण करने वालों में से कोई कहता है कि यह हितकारी है, तो कोई अन्य को हितकारी कहता है, कोई यह श्रेष्ठ तो कोई वह श्रेष्ठ है, इस तरह से बताता है। इन समस्त मनुष्यों का आप ही लक्ष्य हैं। जैसे नदी का गन्तव्य समुद्र ही होता है। परन्तु वस्तुतः मनुष्य की रुचि की विविधता के कारण ही ऐसे अनेकों पन्थ और सम्पद्राय देखे जाते हैं।’

जगत में अनेकों प्रकार के सम्प्रदाय व मत-मतान्तर देखे जाते हैं। इन सम्प्रदाय और मत का आश्रय लेने वाले अनेकों साधक गणों को उनके आचार्य विविध सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुए विविध साधना प्रदान करते हैं। इन सम्प्रदायों का भेद उनके द्वारा निर्धारित किये गए परमात्मा के स्वरूप अथवा मुक्ति के स्वरूप के आधार से होता है। इसकी वजह से प्रामाणिक माना जाने वाला ग्रन्थ भेद होता है, अथवा उपास्य में भेद। परन्तु ये सब समान रूप से एक परमात्मा को ही स्वीकार करते हैं, तथा उनकी परिकाल्पना के अनुरूप के परमात्मा को पाना चाहते हैं।

ऐसे कुछ सम्प्रदायों तथा मत पुष्पदन्तजी यहां बताते हैं कि कई लोग तीन ऋक्, साम और यजु- वेदों को ही प्रामाणिक मानते हैं, तथा उसमें जैसे यज्ञ-याग आदि साधना बताई गई है, उनका बहुत श्रद्धापूर्वक आश्रय लेते हैं। इन शास्त्रों को प्रमाण ग्रंथ की तरह स्वीकार करने वाले छह आस्तिक दर्शन प्रचलित है, वे हैं, सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा (कर्मकाण्ड) तथा उत्तर मीमांसा (वेदान्त)। यह समस्त दर्शन वेदशास्त्रों को प्रमाण की तरह स्वीकार तो करते हैं किन्तु अपनी समझ और रुचि के अनुरूप उसके अर्थ को ग्रहण करते हैं। कई अन्य सम्प्रदाय जो उपास्य के विग्रह के आधार पर देखे जाते हैं। ये सब जिन जिनका अनुसरण करते हैं, उन्हीं को श्रेष्ठ व हितकारी बताते हैं। इतने सम्प्रदाय और मत मतान्तर का अस्तित्व होना भी आप ही की महिमा है। आप ऐसे विभु हैं कि जो जिस भी रूप में ग्रहण करना चाहे उस रूप में ग्रहण कर लेता है। दरस्सल आपकी विविधतापूर्ण सृष्टि में मनुष्य की रुचि की भी विभिन्नता है।

वे समस्त जाने अनजाने अन्ततः आप ही को पाना चाहते हैं। वह अपनी वर्तमान साधना को निष्ठापूर्वक करता है, तो आध्यात्मिक विकास को प्राप्त करते हुए आपके परं वास्तविक तत्त्व को ग्रहण करने में समर्थ हो पाता है। जैसे समस्त नदियां पर्वत से निकलती हैं, उसका गन्तव्य तो सागर ही होता है, कोई सरल मार्ग से जाती है, तो कोई वक्र मार्ग से। उसी प्रकार सब के जीवन का परं गन्तव्य तो आप ही हैं। वस्तुतः परमात्मा सबकी अन्तरात्मा की तरह से विराजमान हैं। अत्यन्त निकटतम परमात्मा को जानने का एक मात्र साधन स्वस्वरूप का ज्ञान ही होता है। पर यह नहीं जानते हुए भिन्न भिन्न अन्य तरीको का आश्रय लिया जाता है।

वेदान्त आश्रम एवं मिशन समाचार

स्वामिनी अमितानन्दजी की संन्यास दीक्षा दिन :

महाशिवरात्रि का दिन पूज्य स्वामिनीजी के संन्यास दीक्षा का दिन था। इस विशेष पर्व पर पूज्य स्वामिनीजी ने श्री गंगेश्वर महादेव का रुद्राभिषेक किया।

१३ साल पूर्व महाशिवरात्रि के दिन ही पूज्य स्वामिनिजी को पूज्य गुरुजी के द्वारा नर्मदाजी के किनारे स्थित खेड़ीघाट पर संन्यासदीक्षा दी गइ थी। संन्यास का अर्थ होता है, समस्त कर्तव्यता तथा समस्त सापेक्ष परिवेश का त्याग। जिसकी वजह से अपनी निरपेक्ष अस्मिता को जाना जा सके। संन्यास एक विशेष धार्मिक अनुष्ठान के द्वारा सम्पन्न किया जाता है जिसमें शिष्य की अपनी इच्छा के साथ गुरु की प्रसन्नता एवं आशिर्वाद समाविष्ट होते है। भगवान शंकराचार्यजी के अनुसार संन्यास के बगैर कभी भी ज्ञान के द्वार नहीं खुल पाते है।

वेदान्त आश्रम में महाशिवरात्रि :

वेदान्त आश्रम में महाशिवरत्रि का पर्व अत्यन्त भक्ति एवं उत्साह के साथ मनाया गया। आश्रम एवं श्री गंगेश्वर महादेव के मन्दिर को पुष्प एवं लाईटों से बहुत सन्दर रूप से सजाया गया। दिवसभर विशेष पूजा एवं अनुष्ठान चलता रहा।

इसी दिन पूज्य स्वामिनि अमितानन्दजी के सन्यासदीक्षा की तेरहवी सालगिरह थी। इस उपलक्ष में प्रथम प्रहर की पूजा एवं अभिषेक पूज्य स्वामिनिजी के द्वारा सम्पन्न किया गया। दूसरे प्रहर की पूजा १२ बजे लखनउ से आएं हुए भक्तों के द्वारा सामूहिक रूप से की गई। तत्पश्चात् शिवजी का मावा तथा सूखे मेवे से शृंगार किया गया। तत्पश्चात् सायं आरती की गई।

श्री गंगेश्वर महादेवजी का विशेष शृंगार :

महाशिवरात्रि के दिन भगवान श्री गंगेश्वर महादेवजी को मालवी अन्दाज में सजाया गया। जिसमें राजाशाही पघडी पहनाई गई।

शिवजी के चारों ओर फूलों से रंगोली सजाई गई। जिसमें फूल की आठ पंक्षुडी का आकार था। यह आठ़ पंखुडी भगवान की अष्टधा प्रकृति को दर्शाता है। जिसके मध्य में महादेवजी उनके सत्ता-स्फूर्ति प्रदाता की तरह विराजमान है। गीता में भगवान ने अपनी परा और अपरा ऐसी दो प्रकार की प्रकृति को दर्शाया है। समस्त जड़ जगत अपरा प्रकृति जो आठ़ में विभक्त हुई है, उसीका विस्तार है। तथा जीव परा प्रकृति है। अपरा प्रकृति सब को आकर्षित करती है। जब साधक एक भौंरे की तरह रंग-बिरंगी अपरा की और आकृष्ट होता है, तब वह धीमे धीमे उसकी गहराई में जाकर वास्तविक खजाने को ढूंढ लेता है।

वेदान्त आश्रम एवं मिशन समाचार

महाशिवरात्रि पर फलाहारी भण्डारा :

भगवान ने गीता में कहा है कि यज्ञ, दान और तप को जीवन में कभी भी नहीं त्यागना चाहिए। प्रत्येक पर्व भी इसी यज्ञ, दान और तपस् के साथ जुड़ा होता है। उसके बगैर कोई भी पर्व अधुरा ही रह जाता है। महाशिवरात्रि भी इसी प्रकार के व्रत-अनुष्ठान का दिन होता है।

व्रत में सामान्यतः जो दैनन्दिन की आदत से हम बन्धे होते है, उसे किनारे किया जाता है। जिससे कीकिसीभ वस्तुपर पराधीनता न रहे तथा अपने आत्मबल को विकसित किया जा सके। महाशिवरात्रि के दिन समस्त आश्रमवासियों एवं भक्तों का व्रत का दिन था। जिसमें भक्तों ने सब प्रकार के अन्न का त्याग किया था। इस प्रकार से यह तपस्या से युक्त दिवस भी रहा।

पूज्य गुरुजी का प्रवचन :

महाशिवरात्रि के दिन शाम को विशेष शृंगार एवं महाआरती हुई। तत्पश्चात् पूज्य गुरुजी का संक्षेप में महाशिवरात्रि की महिमा के विषय में प्रवचन हुआ।

महाशिवरात्रि के दिन व्रत-उपासना की यह परम्परा के पीछे समुद्र मंथन का प्रसिद्ध प्रसंग प्राप्त होता है। जिस समय समुद्र मंथन के दौरान वासुकी सर्प ने जहर उगला तो उस जहर को महादेवजी ने विष को पी लिया। पार्वतीजी ने उसे गले से नीचे नहीं उतर जाएं इसके लिए महादेवजी का गला पकड लिया और विष कण्ठ में ही अटक गया। उसके बाद शिवजी विष के प्रभाव से सुरक्षित रहे इस भावना से देता, असुरो तथा समस्त भक्तों ने पूरी रात जगकर विशेष प्रार्थना एवं अनुष्ठान किया। प्रातः शिवजी ने अपनी आंखें खोली और सब को आशिर्वाद प्रदान किया। सर्व प्रथम ज्योतिर्लिंग का आविर्भाव इसी दिन हुआ था। तथा यह दिन शिव-शक्ति के मिलन के रूप से भी जाना जाता है।

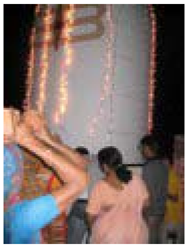

आश्रम के शिरस्थ शिवलिंग का अभिषेक :

पूज्य गुरुजी के प्रवचन एवं ओम् नमःशिवाय के संकीर्तन के पश्चात् आश्रम के छत पर स्थित विशाल शिवलिंग तथा उनकी पादुका का अभिषेक किया गया। भक्तगणों ने अपने सिर पर कलश धारण करके ओम् नमःशिवाय के मंत्र का उच्चारण करते हुए अभिषेक सम्पन्न किया।

महाशिवरात्रि के दूसरे दिन २४ फरवरी को पूत्य गुरुजी ने अपने भक्तों के साथ केट के समीप नवनिर्मित सूर्य मन्दिर का दर्शन किया। यह मन्दिर की स्थापना स्थानीय किसी ज्योतिषाचार्य के द्वारा समस्त विविध ग्रहों की शान्ति के लिए की गइ है। सूर्य देवता के सुन्दर विग्रह के चारों और अन्य देवताओं के मंदिर भी बनाएं गए है।

Check out the detailed Photo Albums of the various functions on **VM News Blog** at http://vmissionews.blogspot.com/

श्रद्धा

श्रद्धा ही ज्ञान की जननी है।

शास्त्र और गुरु में विश्वास ही श्रद्धा है।

वेदान्तवाक्यों में श्रद्धा का अभिप्राय
– अपनी पूर्ण स्वरूपता की श्रद्धा है।

गुरु के प्रति श्रद्धा का अभिप्राय
– गुरु को साक्षात्ब्रह्मस्वरूप जानना है।

श्रद्धा में विश्वास के साथ
बुद्धि की जागृति होना परं आवश्यक है।

आगामी कार्यक्रम

गीता ज्ञान यज्ञ, लखनउ :

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी का लखनउ के हरिः ओम् मन्दिर में दि. २ मार्च की शाम से ८ मार्च की सुबह तक गीता ज्ञान यज्ञ का आयोजन किया गया है। इस सत्र में पूज्य गुरुजी प्रातः के सत्र में स्वामी विद्यारण्य के द्वारा रचित पंचदशी के दसवें अध्याय 'नाटक दीप' पर तथा सायं के सत्र में गीता के तीसरे अध्याय 'कमयोग' पर प्रवचन करेगे।

गीता ज्ञान यज्ञ, भावनगर :

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी का भावनगर स्थित रामदास आश्रम में दि. १ मार्च की शाम से ७ मार्च की शाम तक गीता ज्ञान यज्ञ का आयोजन किया गया है। इस सत्र में पूज्य स्वामिनीजी प्रातः के सत्र में स्वामी विद्यारण्य के द्वारा रचित पंचदशी के दसवें अध्याय 'नाटक दीप' पर तथा सायं के सत्र में गीता के नवें अध्याय 'राजविद्या राजगुह्य योग' पर प्रवचन करेगी।

गीता ज्ञान यज्ञ, नायग्रा, कैनड़ा :

पूज्य गुरुजी के गीता ज्ञान यज्ञ का आयोजन कैनडा के नायग्रा में स्थित हिन्दु मन्दिर में दि १२ से १८ मार्च तक आयोजि किया गया है।

इस प्रवचन माला का विषय गीता का तीसरा अध्याय कर्मयोग रहेगा। यज्ञ के अन्तिम दिन विष्णु सहस्र नाम अर्चना एवं भण्डारे का आयोजन होगा।

गीता ज्ञान यज्ञ, वेलिंग्बोरो, यू.के :

पूज्य गुरुजी के यु के में स्थित वेलिंगबोरो के हिन्दु मंन्दिर में ३ से ८ मई तक गीता ज्ञान यज्ञ का आयोजन किया गया है।

इस प्रवचन माला का विषय गीता का तीसरा अध्याय कर्मयोग रहेगा। यज्ञ के अन्तिम दिन विष्णु सहस्र नाम अर्चना एवं भण्डारे का आयोजन होगा।

साधना शिविर, ऋषीकेश :

पूज्य गुरुजी ७ से १२ जुन '०८ को ऋषीकेश में साधना शिविर का आयोजन किया गया है। इस शिविर में विषय कठोपनिषद का अन्तिम अध्याय तथा गीता का नवां अध्याय रहेगा।

हरिः ओम् !

वेदान्त मिशन के पूर्व संस्करणों को देखने हेतु निम्न पते पर जाएं
http://www.vmission.org.in/mission/ezine.htm

वेदान्त मिशन का इण्टरनेट प्रकाशन

ओम् तत्सत्